# 9 अप्रैल, 2010 को 1130 बजे विश्वविद्यालय सभागार, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में आयोजित स्वर्गीय डा. वी. एन. तिवारी स्मारक व्याख्यान में भारत के माननीय उपराष्ट्रपति श्री मो. हामिद अंसारी का अभिभाषण

## निजी सदाचार और लोक नैतिकता

आज के समारोह में सम्मिलित होकर और डा. वी. एन. तिवारी स्मारक व्याख्यान देकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है।

साहित्य और संसदीय कार्य के क्षेत्र में डा. तिवारी के योगदान को सदैव याद रखा जाएगा। पंजाब विश्वविद्यालय के भूतपूर्व छात्र और इसकी सीनेट के सदस्य के रूप में, उन्होंने विश्वविद्यालय के शैक्षणिक ढाँचे को सुदृढ़ बनाने तथा प्रशासनिक संरचनाओं में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रोफेसर तिवारी ने अपना जीवन राष्ट्र और राष्ट्रीयता से संबंधित हमारे दर्शन पर चिंतन करने संबंधी मूल्यों के निमित्त लगा दिया। यह व्याख्यान इन मूल्यों को सुदृढ़ करने वाले नैतिक तथा सदाचार संबंधी ढाँचे के संबंध में गहराई से विचार करने का एक उचित अवसर विशेषकर इसलिए भी है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 51 क (ख) में इसे प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य बताया गया है "स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय संघर्ष को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे।"

यह सिद्धान्त अभेद्य है। त्रुटि केवल इसके उस तरीके में है जो शासन के विविध अर्थात् विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक आयामों में इसके मानकों तथा पद्धतियों में प्राय: दर्शाया जाता है। संविधान में प्रतिज्ञाओं और प्रतिषेधों का समुच्चय समाविष्ट है; यह संस्थानों की संरचना को प्रतिस्थापित करता है; यह उस पूर्वानुमान पर आधारित होता है कि एक सामाजिक जीव होने के

अतिरिक्त, मनुष्य एक नैतिक जीव भी है जिसके पास सही और गलत का विवेक होता है, और वह सदाचार और नैतिकता के ज्ञात मानदंडों के अनुपालन को मानकर चलता है।

यहाँ परेशान करने वाले कई प्रश्नों से हमारा सामना होता है। सदाचार और नैतिकता के ये मानदंड क्या स्पष्ट रूप से पहचान किए जाने योग्य है? क्या ये निजी और लोक व्यवहार के लिए एक समान हैं? क्या ये सर्वत्र लागू किए जाने योग्य हैं? इनके मामले में नैतिक रूप से विपथन की किस सीमा तक अनुमति दी जा सकती है?

अन्य व्यक्तियों की तरह, दार्शनिक बर्टेण्ड रसेल ने इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न भ्रम को दूर करने का प्रयास किया है: उन्होंने कहा, "नागरिकों में नैतिकता के अभाव में समुदायों का नाश हो जाता है; व्यक्तिगत नैतिकता के बिना उनका कायम रहना मूल्यहीन है। अत: एक उत्कृष्ट संसार के लिए नागरिकों में नैतिकता का होना और व्यक्तिगत नैतिकता दोनों का ही होना आवश्यक है।" उन्होंने कहा कि रीति-रिवाजों प्राधिकार और कानून के प्राधिकार के बीच अंतर करना आवश्यक है, और उन्होंने इस बात को माना कि "नीति-शास्त्र में गहरे दोहरेपन, चाहे वह कितना ही उलझाए क्यों न हो, की पहचान की जानी चाहिए"। मैं यह कहना चाहूँगा कि दोहरापन विभिन्न मानदंडों की खोज की ललक के कारण उत्पन्न हुआ।

घर के समीप और विशेषकर समष्टि रूप में क्या हम नैतिकता और सदाचार के मानदंडों का अनुपालन करते हैं, और क्या हम लोक नैतिकता तथा निजी नैतिकता के बीच अंतर करते हैं? जहाँ हम में से बहुतों के लिए पहले प्रश्न का उत्तर स्पष्ट रूप से 'हाँ' बाद वाले प्रश्न का उत्तर प्राय: अस्पष्ट होता है और छलपूर्ण भी होता है।

अब यहां, शासन से संबंधित, अनुभवजन्य प्रकृति के अन्य बहुत से प्रश्न भी उठते हैं। अच्छाई का शासन कैसे हो सकता है? संसार जैसा है, उसी रूप में इस पर शासन कैसे किया जाए? संसार जैसा है, उसी रूप में अच्छाई इस पर शासन कैसे करे?

हमारे सामने एक व्यवहारिक कठिनाई पेश आती है। सरकारें राष्ट्रीय सुरक्षा, न्याय व्यवस्था, कानून और व्यवस्था को बनाये रखने, सामाजिक एवं आर्थिक विकास और जन कल्याण सुनिश्चित करने को प्राथमिकता प्रदान करती हैं। विशिष्ट शब्दों में नैतिक निर्देशों का उल्लेख विरले ही होता है। तथापि, जैसाकि द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग के चौथे प्रतिवेदन में कहा गया है, "मानकों का एक ऐसा समूह है कि जिन्हें समाज स्वयं पर लागू करता है और व्यवहार, विकल्पों एवं कृत्यों को निर्देशित करने में सहायक होते हैं।" इसमें आगे कहा गया है कि नैतिक व्यवहार की मूल बात "मानकों के रूप में संस्थापित स्पष्ट शब्दों और अभिव्यक्तियों में नहीं अपितु कर्मों में उनको अपनाने में निहित" जिससे "ईमानदारी की संस्कृति" संवर्धन होता है।

दूसरे शब्दों में, नैतिक व्यवहार व्यक्तिगत एवं सामाजिक आचार के सामान्यतया स्वीकृत मानकों से उत्पन्न होता है और उन आदेशों में प्रतिबिम्बित होता है जिन्हें राज्य मानता है, यह शासन के सिद्धांतों की मूल बातें हैं। समाज ऐसे मानकों को स्थापित करता है जो सामान्य नैतिक अंतरात्मा अथवा सामाजिक आचार के सिद्धांतों को प्रतिबिम्बित करते हैं, इन्हें कानूनों में अंतर्विष्ट करता है ताकि राज्य इन्हें लागू कर सके और न्याय दिला सके, तथा, इस प्रकार राज निकाय की वैधता एवं निष्ठा प्राप्त हो सके।

इसी शहर में, पूर्व में, एक अवसर पर मैने नीतिपरायणता में भारतीयों के चिरस्थायी विश्वास और राजघाट में गांधीजी की समाधि के निकट एक पट्टी पर अंकित "सात सामाजिक पाप" की ओर ध्यान आकर्षित किया था। दोनों दृढ़तापूर्वक हमें निजी एवं सार्वजनिक जीवन में लागू एकीकृत मूल्य प्रणाली की ओर ले जाते हैं।

इस प्रकार, सैद्धांतिक स्थिति स्पष्ट है। हमें वरदान के रूप में उचित सामाजिक संस्थाएं भी मिली हैं; पर अब चुनौती है उनके कार्यकरण में व्यवसाय एवं व्यवहार में अन्तर का पता लगाना तथा उस बात पर ध्यान देना जिसे अमर्त्य सेन ने 'सामाजिक कार्यान्वयन' की संज्ञा दी है।

वास्तविक व्यवहार में, सार्वजनिक आचरण और लोक नीति विचार के लिए तीन आयाम प्रस्तुत करते हैं:

पहली बात, हो सकता है वैयक्तिक नैतिकता के कुछ पहलुओं का अपने सरकारी कार्यों के निष्पादन के मामले में लोक सेवा की योग्यता पर कोई प्रभाव नहीं हो पर अन्य उदाहरणों में, निजी अनैतिकता उनके सार्वजनिक कार्यकरण को प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: प्रभावित कर सकती है। सभी सरकारें मनुष्यों द्वारा संचालित होती हैं और जैसेकि अमरीकी इतिहासकार जेम्स हार्वे रॉबिंसन ने उल्लेख किया है "ऐसी किसी प्रक्रिया की खोज नहीं हुई है जिसके माध्यम से सार्वजनिक दायित्व निभाने की स्थिति पर पहुँचे किसी व्यक्ति को उसके अपने कल्याण, पक्षपात उसकी नस्ल एवं पूर्वाग्रहों उसके अपने हित से उसे दूर रखा जा सके।"

दूसरी बात, आधुनिक राज्य संरचना के सृजन ने भी नैतिक प्रेरणा एवं पहल के कुछ स्रोतों को व्यक्ति एवं समुदाय से बृहत पेशेवर/निगमित समूहों अथवा सरकारी संस्थाओं की ओर उन्मुख कर दिया है। उस हद तक व्यक्तिगत कर्मचारी यांत्रिक हो गया है तथा निजत्व खो चुका है। इससे वह व्यक्तिगत सहानुभूति की भावना से शून्य हो गया है, और इस प्रकार नैतिक रूप से निष्क्रिय नागरिक बन जाता है।

तीसरी बात, सार्वजनिक नैतिकता और निजी आचार के बीच समान विश्वास यह है कि सार्वजनिक और निजी कार्यों के मूल्यांकन में संदर्भ का एकमात्र बिंदु स्वयं और व्यक्तिगत हित नहीं है। पॉल एप्पलबाय, जिन्होंने 1950 के दशक में हमारे लोक प्रशासन पर बढ़िया प्रतिवेदन लिखा था, ने ऐसे शब्दों में नैतिक सार्वजनिक निर्णय को परिभाषित किया था, जो आज भी प्रासंगिक है:

"कोई कार्रवाई उन प्रक्रियाओं और संकेतों के अनुरूप होती है, जो कि अधिक सामान्य आजादी के माध्यम के रूप में राजनीतिक आजादी की आम सुरक्षा के लिए अब विकसित किए गए होते हैं, सार्वजनिक निर्णय द्वारा संशोधन अथवा बदलाव के लिए मार्ग खुला रखती है:----- नियंत्रणों की व्यवस्था के भीतर की जाती है जिसमें कार्रवाई के उत्तरदायित्व की पहचान जनता द्वारा और सार्वजनिक रूप से महसूस की गई  जरूरतों न कि नेताओं की निजी एवं व्यक्तिगत जरूरतों की प्रतिक्रिया में संरचना के रूप में नेतृत्व के योगदान को प्रतिबिम्बित करती है।"

II

पुरातन समय से अब तक की शासन संरचनाओं के अध्ययन से पता चलेगा कि सार्वजनिक प्रकार्यों के निर्वहन में व्यक्तिगत विफलताओं, सार्वजनिक घोटाले और इसके परिणामस्वरूप सुधारात्मक उपायों की मांग के परिणामस्वरूप सार्वजनिक नैतिकता का ढांचा विकसित करने में तेज़ी आई है। कौटिल्य स्पष्ट रूप से इस बात पर बल देते हें कि "वह राजा जो  धर्मशास्त्रों और अर्थशास्त्र की शिक्षाओं का उल्लंघन करता है, अपने ही अन्याय से राज्य का नाश करता है"। अच्छे शासकों में "गलतियों को सुधारने, अत्याचारियों से क्षतिपूर्ति वसूल करने, न्याय करने और अपनी प्रजा की बात किसी बिचौलिये के बिना खुद अपने कानों से सुनने" के लिए इसका पालन किया। इस प्रकार, लोकाचार के व्यक्तिगत उदाहरणों से सार्वजनिक नैतिकता के तत्व निकाले गये।

इस संदर्भ में हमारे जैसे बहु-सांस्कृतिक लोकतंत्र के लिए प्रासंगिक सार्वजनिक नैतिकता के मूलभूत तत्वों की जाँच करना उपयोगी होगा। इसके कुछ तत्वों की पहचान की जा सकती है:

पहली बात यह है कि लोक हित के लिए सार्वजनिक सेवा की क्षमता के बारे में स्वस्थ सकारात्मक भावना सार्वजनिक नैतिकता का एक अनिवार्य तत्व है। सकारात्मक सोच के बिना जन सेवा बिगड़ कर मानवद्वेष, हेर-फेर या स्व-हित का खुला अनुसरण रह जायेगी। केवल तब, जब कोई

सार्वजनिक जीवन तथा लोक नीति की अस्पष्टताओं और अनिश्चितताओं में जनहित की संभावना देख सकता है, वह उस दिशा में काम करना आरंभ कर सकता है।

दूसरी बात, निर्णय लेने के लिए आवश्यक दृढ़ता का साहस और विरोध के बावजूद उन निर्णयों को कायम रखना प्रभावी राजनीतिक और सामाजिक कार्रवाई के लिए अनिवार्य है। मित्रों और परिवार के सदस्यों पर अनुग्रह करने से मना करने जेसे साधारण मुद्दों और शांति तथा युद्ध संबंधी महत्वपूर्ण निर्णय लेते समय ऐसी हिम्मत दिखाने की जरूरत होती है। हमारे हाल के तथा उससे पहले के इतिहास में इसके कई उदाहरण देखे जा सकते हैं।

तीसरी बात, सार्वजनिक नैतिकता के लिए निष्पक्ष, त्वरित और निर्वैयक्तिक रीति में न्याय के अनुसरण और उसकी व्यवस्था करने की जरूरत होती है। अन्याय माननीय भावनाओं सामान्यता विद्रोह और विनाश की भावनाओं का एक शक्तिशाली प्रेरक है। हमारे बहु धार्मिक समाज का हर शास्त्र इस बात का प्रमाण है।

चौथी बात, आधुनिक लोकतंत्र में विधि सम्मत शासन को कायम रखना सार्वजनिक नैतिकता की अनिवार्य आवश्यकता है। जॉन लोक के कथन- "जहाँ कानून समाप्त होता वहां निरंकुशता आरंभ होती है- की वैधता सार्वभौमिक है। कानून का कड़ाई से पालन और मूलभूत ईमानदारी इस तत्व का अंतरंग भाग हैं। ईमानदारी का मानक 'न्यूनतम समानता' नहीं अपितु 'उच्चतम समानता के सिद्धांत' को होना चाहिए।

पांचवीं बात, लोक नीति में नैतिक अस्पष्टताओं से निपटने और संसाधनों तथा कार्यकलापों को प्राथमिकता प्रदान करने के लिए मानवीय दुखों के प्रति सहानुभूति और दया की भावना आवश्यक है। मानवीय शिष्टता, विनम्रता और व्यापक हित के लिए समझौता करने की इच्छा के साथ जन सेवा का रवैया लोक सेवा के क्षेत्र में पेश आने वाले कठिन नैतिक वातावरण का सामना करने में सहायक होता है।

III

ऐसा न हो कि उक्त बातों से एक सुखकर छवि बन जाए मैं इसमें कुछ महत्वपूर्ण बाधाओं का उल्लेख करना चाहूंगा। रीति-रिवाज और परंपराएं इसका एक पहलू है। हम में से प्रत्येक व्यक्ति की  एक समूहगत पहचान है और रीति-रिवाज यह कहते हैं कि समूह पर चाहे वह परिवार हो, जाति हो या जनजाति हो - विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप, व्यक्तिगत रूप से ईमानदार व्यक्ति कभी-कभी पेचीदा सार्वजनिक नीतिगत विकल्पों से सामना होने पर नैतिक दुविधा में पड़ जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, जबकि परिवार, वंश या समुदाय के सदस्यों की मदद करना अच्छा व्यक्तिगत सदाचार है, इसे अस्वीकार्य सार्वजनिक बुराई माना जाएगा और भाई-भतीजावाद कहा जाएगा। इन उदाहरणों की संख्या को बढ़ाया जा सकता हैं और लोक नीति के अनुपालन  में एक घृणित आयाम जोड़ देते हैं।

यही बात उन्मुक्तता के वातावरण और उत्कृष्टता मापने के इसके अनैतिक मानदंडों पर लागू होती है।

हाल के वर्षों में, हमारे सार्वजनिक क्षेत्र में देश में शासन के संकट पर वाद-विवाद होता देखा गया है। जनता की इससे स्पष्ट विरक्ति ने वाद-विवाद को शासन की संरचना के नैतिक पहलू पर केन्द्रित कर दिया है। यह द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग के प्रतिवेदन में भी प्रतिबिम्बित हुआ था जो इस स्पष्ट स्वीकृति के साथ प्रारंभ होता है कि समृद्धि और समानता की हमारी तलाश में शासन एक कमजोर कड़ी है। यह सत्यनिष्ठा को "वित्तीय ईमानदारी से काफी कुछ अधिक" के रूप में परिभाषित करता है और संस्थागत और व्यक्तिगत भ्रष्टाचार के दोहरे पहलुओं पर ध्यान देता है। यह 'भ्रष्टाचार के तथ्य के प्रति समाज में बढ़ती उन्मुक्तता' का उल्लेख

करता है और 'सार्वजनिक जीवन में प्रलोभन देने की विकृत पद्धति का, जो भ्रष्टाचार को उच्च लाभप्रद-कम जोखिमपूर्ण क्रिया बनाती है,' निराकरण करने का आग्रह करता है।

प्रतिवेदन की  कुछ अन्य समुक्तियां स्पष्ट रूप से इसकी कहानी बयान करती है-

- अभी तक की गई भ्रष्टाचार-रोधी कार्यवाही अप्रभावी नज़र आती है और जनता इनके संबंध में व्यापक आलोचना करती है। यह आलोचना इतनी तेजी से फैल रही है कि यह हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली तक के लिए अच्छी बात नहीं है।

- भ्रष्टाचार तीन कारकों द्वारा बहुत अधिक बढ़ाया गया है- शक्ति का मनमाने ढंग से प्रयोग करने की प्रवृत्ति, समाज में शक्ति की अत्यधिक असमानता, और ऐसी नीतियां जो गैर-इरादतन नागरिक को राज्य की दया पर रख देती है।

- राजनीति की गुणवत्ता ऐसी है कि ईमानदारी को अस्तित्व में रहने के प्रतिकूल माना जाता है। यदि सार्वजनिक जीवन निजी लाभ चाहने वाले अवांछनीय और भ्रष्ट तत्वों को आकर्षित करता है, सत्ता का दुरूपयोग और भ्रष्टाचार एक मानदंड बन जाता है।

- रिश्वतखोरी के बड़ी संख्या में मामलों में, नागरिक जबरन धन-ऐंठने का शिकार होता है और ऐसी सेवा प्राप्त करने के लिए, जिसका वह हकदार है, रिश्वत देने के लिए बाध्य होता है।

- हमारी अर्थव्यवस्था के विभिन्न हिस्सों में भ्रष्टाचार के बढ़ते स्तर से बड़े पैमाने पर काले धन का सृजन, गंभीर आर्थिक अपराध और धोखाधड़ी, और काले धन का शोधन हो रहा है और इससे ऐसी गंभीर स्थिति पैदा हो गई है कि राज्य के विरूद्ध आतंकवादी गतिविधियों का वित्तपोषण तक किया जा रहा है।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि इनमें से प्रत्येक तथ्य गणतंत्र के नैतिक और विधिक मानदंडों से पलायन का संकेत देता है। इसके अतिरिक्त, सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के

कार्यान्वयन से होने वाले लाभ, जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से खाद्य की व्यवस्था, कुप्रशासन और भ्रष्टाचार के कारण अप्रभावी सिद्ध हो रहे हैं।

उपर्युक्त तथ्य एक साथ मिलकर अपरिहार्य रूप से यह निष्कर्ष प्रदान करते हैं कि आज सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक खतरा है और हमें तदनुसार इससे निपटना होगा।

हम सार्वजनिक सेवा क्षेत्र में तीन प्रकार के भूमिका-धारकों- सिविल सेवा, विधायिका और न्यायपालिका के लिए एक ढीली-ढाली आचार संहिता रखते हैं। प्रथम के संबंध में, एआरसी ने सिफारिश की है कि सार्वजनिक सेवा के क्रियाकलापों को शासित करने वाले कुछ 'सार्वजनिक सेवा मूल्य' और एक 'आचार संहिता' होनी चाहिए जो विधि द्वारा निर्धारित किए जाएं। 2007 में, एक प्रारूप सार्वजनिक सेवा विधेयक टिप्पणियों हेतु सार्वजनिक क्षेत्र में प्रस्तुत किया गया था जिसे संसद में पुर:स्थापित किया जाना अभी बाकी है।

विधायिका के मामले में, राज्य सभा में सदस्यों के लिए आचार समिति द्वारा तैयार की गई आचार संहिता को अपनाया है। सदस्यों को परिसम्पत्तियों एवं देयताओं तथा विनिर्दिष्ट आर्थिक हितों की भी घोषणा करनी होती है। कुछ ऐसी ही प्रक्रियाएं लोक सभा में भी हैं। जहां तक उच्चतर न्यायपालिका का संबंध है, "1999 में हुए भारत के मुख्य न्यायाधीशों के सम्मेलन में अंगीकृत रिस्टेटमेंट ऑफ वैल्यूज ऑफ जुडिसियल लाईफ" तथा "दि बंगलौर प्रिंसिपल्स ऑफ जुडिसियल कंडक्ट, 2002" में न्यायिक सदाचार नीति का सारांश प्रस्तुत किया गया है।

कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका में सदाचार संबंधी मानदण्डों में सुधार लाने के लिए अब तक जो वैधानिक और प्रशासनिक कदम उठाए गए हैं वे स्पष्ट तौर पर अपर्याप्त समझे

जा रहे हैं। अत:, और अधिक उद्देश्यपूर्ण एवं परिणामोन्मुखी दृष्टिकोण अपनाये जाने की अत्यंत आवश्यकता है।

देवियो और सज्जनो,

काफी समय पहले दार्शनिक अरस्तू ने कहा था मनुष्य में नैतिक गुण कुदरती तौर पर नहीं होते बल्कि इन्हें आदतन ग्रहण करना पड़ता है। यह आदत व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों ही तरह से विकसित करनी पड़ती है। आज भारत की स्थिति पर नज़र डाले तो पता चलता है कि इस आदत के विकास की हर स्तर पर, घर में, स्कूल में और व्यापक सार्वजनिक क्षेत्र में, उपेक्षा की जा रही है। इसके बदले, नैतिक शून्यता को तरजीह दी जा रही है जो घातक है। इसे बदलने की आवश्यकता है और अवश्य बदला जाना चाहिए। तभी लोक नैतिकता में उस नीतिपरायणता की झलक दिखेगी जिसकी चर्चा प्राचीन और आधुनिक साधु-संतों ने की है।

यह सिर्फ सांस्कृतिक विकल्पों अथवा चुनिंदा गुणों से संबंधित मामला ही नहीं है बल्कि इतिहास इस बात का गवाह है कि कोई भी राष्ट्र व्यक्तिगत और सामाजिक आचरण में उच्च-स्तरीय नैतिक सत्यनिष्ठा प्राप्त किए बिना महानता प्राप्त नहीं कर पाया है।

आज का स्मारक भाषण देने के लिए मुझे आमंत्रित करने पर मैं मनीष तिवारी जी को धन्यवाद देता हूँ और आप लोगों ने धैर्यपूर्वक मुझे सुना इसलिए आप सब को भी धन्यवाद देता हूँ।